REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 6 | MARCH - 2026

'कफन' : सामाजिक चेतना और यथार्थवाद

डॉ. कस्तूरी चक्रवर्ती
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कोकराझार विश्वविद्यालय, असम.

शोध सार :

'कफन' मुंशी प्रेमचंद रचित सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक है । 'कफन' में प्रेमचंद कोरे आदर्शवाद के स्थान पर तत्कालीन समाज व्यवस्था की विसंगतियों को अनुभूत करते हुए यथार्थवादी दृष्टिकोण से विचार करते है । वास्तव में जटिल से जटिलतर होते हुए जीवन संग्राम के प्रखर चेतनात्मक अभिव्यक्ति 'कफन' कहानी में मिलती है । आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी के अनुसार –'कफन कहानी की विशेषता यह है कि इसमें मनोवैज्ञानिक चित्रण के साथ-साथ एक कठोर सामाजिक वास्तविकता भी चित्रित हुई है ।

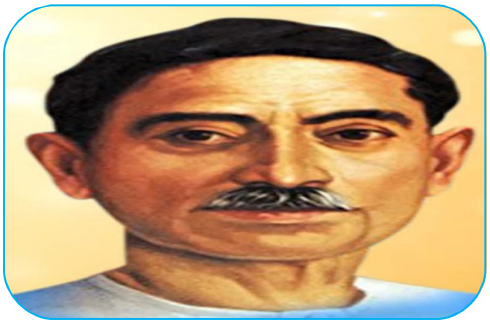

बल्कि, यह कहना चाहिए कि सामाजिक चित्रण के अन्तर्गत ही मनोवैज्ञानिक छाया-चित्र उपस्थित हुए हैं ।' घीसू और माधव प्रेमचंद कृत 'कफन' कहानी के दो केन्द्रीय चरित्र है । प्रेमचंद ने पूरी कहानी का तानाबाना इनके आधार पर ही बुना है । घीसू प्रौढ़ एवं विधुर है । उसके नौ संतानों में से माधव ही जीवित संतान है जिसकी शादी बुधिया के साथ हुई है । मूलत: बाप-बेटों के चरित्रों में कोई असमानता नहीं दिखलाई पड़ती है । बल्कि भाग्यवाद, कामचोरी, आलस जैसी बातों में उनमें अद्‌भुत साम्य दिखलाई पड़ता है । सम्भवत: इसका कारण समाज की वे विसंगतियाँ है जिनसे दोनों समान रुप से मर्माहत हुए है ।

बीज शब्द : गरीबी, अमानवीयता, भूख, विसंगतियाँ, यथार्थवाद.

मूल आलेख :

'कफन' घीसू और माधव का एक प्रकार से जीवन चरित्र है । जीजिविषा दोनों में इतनी प्रबल है कि विपरीत परिस्थितियाँ भी उनमें निराशावादी दृष्टि नहीं पैदा कर पाती । भूख की तड़प इतनी ज्यादा है कि नैतिकता और मानवीयता की सारी बातें उनके लिए मूल्यहीन और बेमाने है । जीवन के कड़वे अनुभवों ने उनकी सारी सम्वेदनाओं पर पर्दा डाल दिया है । यही कारण है कि अपनी जवान बीबी बुधिया को प्रसव वेदना से तड़पते और मरते देखकर भी माधव निर्विकार भाव से आलू भूनकर खा सकता था ।

"मरना ही है तो जल्दी मर क्यों नहीं जाती ! देखकर क्या करुँ ?"[1] माधव के इस कथन में प्रेमचंद ने मानो यथार्थ को बेपर्दा कर दिया है । यह अतिरंजित लग सकता है कि क्या कोई इतना भी मनुष्यत्त्वहीन हो सकता है ।

जैसा कि प्रेमचंद ने लिखा है – "माधव को भय था कि वह कोठरी में गया, तो घीसू आलूओं का बड़ा भाग साफ कर देगा ।"[2] पर कहानी के उत्तरार्ध में घीसू और माधव का जो आकल्पित चरित्र पाठकों के सामने आता है उसके आलोक में देखे तो यह अतिरंजित नहीं लगता ।

'कफन' कहानी के आधार पर घीसू और माधव में अकर्मण्यता, कामचोरी और आलस समान रुप से व्याप्त था । घीसू एक दिन काम करता तो तीन दिन आराम । माधव इतना कामचोर था आधे-घंटे काम करता तो घंटे भर चिलम पीता । इसलिए उन्हें कहीं मजदूरी भी नहीं मिलती थी । घीसू ने आकाशवृत्ति से साठ साल की उम्र काट दी और माधव भी सपूत बेटे की तरह बाप का ही अनुगामी था । माधव को गरीबी अपने पिता से उत्तराधिकार में मिला था । घर में मिट्टी के दो चार बर्तनों के सिवाय कोई सम्पत्ति नहीं थी । फटे चिथड़ों से अपनी नग्नता को ढाँके हुए जीए जाते थे । बहू प्रसव वेदना से मर रही थी लेकिन उनके पास इलाज के लिए फूटी कोड़ी भी न थी । माधव के इस कथन में उसकी दैन्यता और गरीबी की टीस उभरकर सामने आते है –

"मैं सोचता हूँ कोई बाल-बच्चा हो गया तो क्या होगा ? सोंठ, गुड़, तेल, कुछ भी तो नहीं घर में !"[3]

मुंशी प्रेमचंद ने 'कफन' कहानी की रचना 1936 में की । यह वह काल था जब सामाजिक विसंगतियाँ कवियों और लेखकों को सामाजिक बदलाव के लिए उत्प्रेरित कर रही थी । प्रेमचंद भी अपनी कहानियों में आदर्शवादी समाधान ढूढने की अपेक्षा यथार्थवादी दृष्टिकोण अपना चुके थे । उनकी यह यथार्थवादी शैली 'कफन' कहानी में पूर्णत: और परिपक्वता को प्राप्त करती हुई प्रतीत होती है ।

'कफन' में वे समाज और जीवन की सच्चाई को उसके नग्नतम रुप में ही केवल देखने का प्रयत्न ही नहीं करते बल्कि उसके उस पहलू को पकड़ने की चेष्टा करते है जिस ओर साधारणत: दृष्टि नहीं जाती । प्रेमचंद ने घीसू और माधव के चरित्र का विकास मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया है । अत: उनके आचरण अप्रत्याशित होते हुए भी अविश्वसनीय नहीं है । उनका भाग्यवादी होना और भीषण अभावों में जुझते हुए भी काम से जी चुराना एक ही सिक्के के दो पहलू है । प्रेमचंद ने इसे स्पष्ट भी किया है –

"जिस समाज में रात-दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से बहुत कुछ अच्छी न थी और किसानों के मुकाबले में वे लोग, जो किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं ज्यादा सम्पन्न थे वहाँ इस तरह की मनोवृत्त का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी । हम तो कहेंगे घीसू किसानों से कहीं ज्यादा विचारवान् था, जो किसानों के विचारशून्य समूह में शामिल होने के बदले बैठक-बाजों की कुत्सित मंडली में जा मिला था ।"[4]

घीसू और माधव दोनों ही भाग्यवादी थे । जीवन के कठिन से कठिन चुनौती को इसी भाग्यवादिता के कारण वे सहजता से झेल लेते थे । घीसू-माधव को समझाते हुए एक स्थान पर कहता है –

"सब कुछ आ जायगी । भगवान दे तो जो लोग अभी एक पैसा नहीं दे रहे हैं वे ही कल बुलाकर रुपये देंगे । मेरे नौ लड़के हुए, घर में कभी कुछ न था मगर भगवान ने किसी तरह बेड़ा पार ही लगाया ।"[5]

प्रेमचंद ने अनुभव किया कि उनके आदर्श जीवन में फलीभूत नहीं हुए इसलिए कल्पनात्मक आदर्श का पल्ला छोड़कर वे यथार्थ जीवन की विद्रुपताओं का चित्रण करने लगे । डॉ. बच्चन सिंह ने ठीक ही लिखा है –

'यह कहानियाँ इसी आदर्श की खूंटी पर नहीं टंगी है । इनमें आलोचक यह नहीं बता सकता कि कहानी का सम्प्रेष्य कोई खास वस्तु है । वे अपना सम्प्रेष्य स्वयं है – आदि से अंत तक । कोई परिणति नहीं है कोई चरमोत्कर्ष

नहीं है । केवल सांकेतिकता है, पाठकों की कल्पना को उड़ान भरने की छूट है । ..... एक ऐतिहासिकता संगति के फलस्वरुप कफन में आधुनिक जीवन का अकेलापन और डी हूमेनाइजेशन का सहज समावेश हो गया है । यह हिन्दी की पहली आधुनिकता बोध की कहानी है ।'

विपन्नता, अशिक्षा और सामाजिक कुसंस्कारों में उन्हें भाग्यवादी ही नहीं अन्धविश्वासी भी बना दिया था । पत्नी की प्रसव वेदना पर बेपरवाह माधव को टोकते हुए घीसू कहता है –

"जाकर देख तो, क्या दशा है उसकी ? चुड़ैल का फिसाद होगा, और क्या ? यहाँ तो ओझा भी एक रुपया माँगता है !"[6]

एक अन्य स्थान पर घीसू-माधव से कहता है कि "कफन लगाने से क्या मिलता ? आखिर जल ही तो जाता । कुछ बहू के साथ तो न जाता ।"[7] इस पर अन्धविश्वासी माधव कहता है –

"दुनिया का दस्तूर हैं, नहीं लोग बाँमनो को हजारों रुपये क्यों दे देते हैं । कौन देखता है, परलोक में मिलता है या नहीं ।"[8]

घीसू और माधव दोनों ही इस व्यवहारिक सच्चाई को समझ चुके थे कि उनकी स्थिति और नियति में कोई बहुत बड़ा ऊलट-फेर नहीं होने वाला । उनकी अकर्मण्यता के पीछे भी यहीं व्यवहारबुद्धि काम कर रही थी । जीवन भर विपन्नता, अभाव और अतृप्ति ने उन्हें स्वभावत: लोभी बना दिया था । अपने भूख मिटाने या खेतों में फलते गन्ने, मटर, आलू आदि को देखकर लोभ संवरण न कर पाने के कारण अक्सर वे चोरी भी कर लिया करते । माधव तो इस भय से अपनी बीमार पत्नी को देखने झोपड़ी के अंदर भी नहीं घुसता कि कहीं घीसू खाने के लिए चुराये आलूओं का एक बड़ा भाग साफ न कर दें ।

घीसू जब बीस साल पहले ठाकुर की बारात में मिली दावत को याद कर उसके किस्से अपने बेटे माधव को सुनाता है तो उनमें हुए संवाद से उनके चरित्र पर प्रकाश पड़ता है –

" तुमने बीस एक पूरियाँ खायी होंगी ?
बीस से ज्यादा खायी थी !
मैं पचास खा जाता !
पचास से कम मैंने भी न खायी होंगी । अच्छा पट्ठा था । तू तो मेरा आधा भी नहीं है ।"[9]

कफन खरीदने के लिए इकठ्ठे किए पैसों से वे शराब और तली हुई मछलियाँ खरीदकर अपने लोभ को तृप्त करते है । इस कहानी के जरिए प्रेमचंद यह दिखाते है कि अत्याधिक गरीबी और भूख इंसान को असंवेदनशील बना देती है । घीसू और माधव के लिए भी उनकी भूख प्रथम आवश्यकता है । माधव की पत्नी बुधिया प्रसव पीड़ा में मर रही थी, लेकिन घीसू और माधव आलू भूनकर खाने में व्यस्त हैं । उनकी प्राथमिकता रोटी है, न कि अपने प्रियजन की जान । उनका पेट भरे और पेट भरने के पश्चात् यदि उन्हें पसंदीदा भोजन मिल जाए तो सर्वोत्तम होगा । पेट की भूख मनुष्य को हैवान बना सकती है । दूसरों के आगे गिड़गिड़ाने को बाध्य कर देती है और उपहास का पात्र बनाकर उसका आत्मविश्वास छीन लेती है ।

निष्कर्ष :

मुंशी प्रेमचंद की अमर कृति कफन कथा वस्तु एवं कथा शिल्प के क्षेत्र में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने के कारण महान कथाओं की कोटि में आती है। घीसू और माधव सामाजिक परिस्थितियों से त्रस्त होकर ही अपनी नैतिकता से समझौता करते हुए आलुओं के चंद टुकड़ों के लिए बुधिया की जान की भी परवाह नहीं करते। उनकी संवेदनशून्यता परिस्थिति जन्य थी। 'कफन' कहानी में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि प्रेमचंद इन तथाकथित झूठे आदर्शो का पर्दाफाश करना चाहते है। घीसू और माधव कफन के लिए मिले पैसों को शराब तथा पूड़ियाँ खाने में उड़ा देते हैं क्योंकि उन्हें धार्मिक आडम्बर में विश्वास नहीं। इतना ही नहीं वे शोषक वर्ग के प्रति अपना रोष भी प्रकट करते हैं – "वह न बैकुण्ठ में जायगी तो क्या ये मोटे-मोटे लोग जायँगे, जो गरीबों को दोनों हाथों से लूटते हैं और अपने पाप को धोने के लिए गंगा में नहाते हैं और मन्दिरों में जल चढ़ाते हैं !"[10] वस्तुत: 'कफन' सामाजिक यथार्थवाद का दर्पण है। इसमें प्रेमचंद ने अपने जीवन के समस्त अनुभवों का तत्व प्रस्तुत किया है। 'कफन' कहानी में प्रेमचंद ने जिन समस्याओं को उठाया है, वे आज भी समाज में व्याप्त हैं जहाँ ग्रामीण जीवन की विसंगतियों को देखा जाता है, उनकी अभिव्यक्ति 'कफन' के अतिरिक्त कुछ अन्य हो ही नहीं सकती।

संदर्भ :

1. डॉ. नंद किशोर सिंह – हिन्दी गद्य सुधा, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी, दिसंबर -2001, पृ. सं. – 106
2. वही, पृ. सं. – 108
3. वही, पृ. सं. – 108
4. वही, पृ. सं. – 109
5. वही, पृ. सं. – 108-109
6. वही, पृ. सं. – 108
7. वही, पृ. सं. – 114
8. वही, पृ. सं. – 114
9. वही, पृ. सं. – 111
10. वही, पृ. सं. – 117